उत्तराखंड उच्च न्यायालय नैनीताल में,

2008 की आपराधिक संशोधन संख्या 58

श्रीमती खिला देवी
संशोधनवादी

बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य
प्रत्यर्थीगण सुश्री पुष्पा जोशी, संशोधनवादी की वरिष्ठ अधिवक्ता

श्री सुभाष त्यागी भारद्वाज, राज्य के उप महाधिवक्ता

श्री आर. सी. टम्टा, प्रतिवादी नं.2 से 4 के अधिवक्ता ।

श्री बी. एस. अधिकारी, अधिवक्ता, प्रतिवादी नं.5 से 8 के अधिवक्ता ।

माननीय रविन्द्र मैथानी, जे. (मौखिक)

त्वरित पुनरीक्षण को दिनांक 28.02.2008 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध वरीयता दी गई है, जो 2006 की सत्र विचारण संख्या 21, राज्य बनाम ।पप्पू लाल और अन्य के मामले में सेशन न्यायाधीश, बागेश्वर (संक्षेप में 'द केस') में पारित किया गया था। आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा, निजी प्रतिवादी नं.2 से 8 को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अंतर्गत निर्दोष साबित किया गया है।

2 इस पुनरीक्षण के निपटान के लिए आवश्यक तथ्य, संक्षेप में, निम्नानुसार हैंः

2. 1 दिनांक 05.01.2005 को, प्रतिवादी नं.2 से 8, अर्थात् पप्पू लाल, गोविंद सिंह, लक्ष्मण राम, नारायण राम, पूरन चंद्र, गोविंद प्रसाद चंद्र राम और बाला सिंह (इन प्रतिवादी को यहां इसके बाद “अभियुक्त” के रूप में संदर्भित किया जाएगा) ने मृतक राजू राम को उसके घर से, जब वह अभी भी बिस्तर पर था, ले लिया।आरोपियों ने उसे लाठियों, मुट्ठियों और डंडों से बेरहमी से पीटा।उनकी पत्नी और पूरा परिवार रो रहा था लेकिन उन्हें दूर रहने के लिए कहा गया।मृतक राजू राम को घसीटा गया और एक स्थान पर बादिया टोक 'मृतक राजू राम की मृत्यु हो गई।जब आरोपी मृतक को खींच रहे थे और उसकी पिटाई कर रहे थे, तो उसके छोटे भाई पीडब्लू 4 प्रकाश राम ने हाथ जोड़कर आरोपी से हथकड़ी खोलने और उसे छोड़ने का अनुरोध किया।लेकिन आरोपी ने उसकी बात नहीं मानी।

मृतक की पत्नी खिला देवी ने घटना की रिपोर्ट दर्ज कराई।इसके आधार पर आरोपी के विरुद्ध भा.दं.सं. की खंड 302 के अंतर्गत प्राथमिकी दर्ज की गई है।जांच की गई, मृतक के शव का पोस्टमार्टम किया गया।स्थल योजना तैयार की गई और आरोपी के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया।यह मामले का आधार है।

2. 2.05 जनवरी, 2012 को अभियुक्तों पर भारतीय दंड संहिता की खंड 302 के अंतर्गत आरोप लगाए गए, जिने उन्होंने इनकार किया और विचारण का दावा किया।अपने मामले को साबित करने के लिए, अभियोजन ने दस गवाहों की जांच की, जिनमें पीडब्लू1 मोहन राम, पीडब्लू2 शांति आर्य, पीडब्लू3 खिला देवी, पीडब्लू4 प्रकाश राम, मृतक के छोटे भाई, पीडब्लू5 मोहन राम, पीडब्लू6 विजय पाल सिंह मेहता, पीडब्लू7 अर्जुन लाल, पीडब्लू8 बचन सिंह राणा, पीडब्लू9 बी. एल. वर्मा और पीडब्लू10 एम. जांच अधिकारी आर. टमटा, जिन्होंने मामले में आरोप पत्र प्रस्तुत किया, ये सभी शामिल है। वास्तव में, इस मामले में दो जांच अधिकारी हैं।इनसे एक पीडब्लू 8 बचन सिंह राणा है, जिसने साइट प्लान तैयार किया था, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि जांच सीबीसीआईडी को सौंप दी गई थी। सीबीसीआईडी द्वारा आरोप पत्र दाखिल किया गया । दण्ड प्रक्रिया संहिता के खंड 313 के अंतर्गत आरोपी कि जाँच कि गई। उन सभी ने अभियोजन पक्ष के सबूतों से इनकार किया और कहा कि उन्हें शत्रुता के कारण गलत तरीके से फंसाया गया है।आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा सभी अभियुक्तों को बरी कर दिया गया है।असंतुष्ट, मुखबिर ने तत्काल संशोधन दायर किया।

3. वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम द्वारा पार्टियों के वकील को सुना और अभिलेख का अवलोकन किया।

4. संशोधनवादी के विद्वान वकील यह प्रस्तुत करेंगे कि यह अभिरक्षा में मृत्यु का मामला है।किन परिस्थितियों मे मृतक की मृत्यु हुई थी, इसको समझाने का भार उस अभियुक्त पर था, जिसकी हिरासत में मृतक की मृत्यु हुई।

यह तर्क दिया गया है कि यह बोझ अभियुक्त द्वारा नहीं हटाया गया है.यहां तक कि संहिता की धारा 313 के से परीक्षा में, आरोपी ने यह समझाने के लिए एक शब्द भी नहीं लिखा कि यह कैखंड हुआ।यह तर्क दिया जाता है कि यह एक अवैधता है, जो पूरे विचारण को दूषित करती है और इसकी पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के प्रयोग में, आक्षेपित निर्णय और आदेश को दरकिनार किया जाना चाहिए और मामले को पुनः आदेश के लिए प्रतिप्रेषित किया जाना चाहिए।

दूसरी ओर, चार अभियुक्तों की ओर से, अर्थात् प्रतिवादी नं.5 से 8, श्री बी. एस. अधिकारी प्रस्तुत करेंगे कि यह कोई साक्ष्य मामला नहीं है।नामित वकील ने जांच के दौरान तैयार की गई साइट योजनाओं का उल्लेख किया है, जो संकेत देते हैं कि उन्होंने घटना के स्थान के पास कहीं भी पीडब्लू 4 प्रकाश राम की उपस्थिति नहीं दिखाई.इसके आधार पर, यह तर्क दिया जाता है कि, वास्तव में, यह बिना किसी सबूत का मामला है और किसी भी विकृति का कोई प्रश्न नहीं है.यह तर्क दिया गया है कि अभियुक्तों ने अपना बोझ तब कम कर दिया था जब उन्होंने यह लिखित रूप में दिया था कि मृतक की मृत्यु कैसे हुई।अभियुक्त पप्पू लाल, एक्स ए 19, द्वारा लिखे गए एक पत्र का संदर्भ दिया गया है, जिसमें कहा गया है कि जब हिरासत में था, तो मृतक एक खाई में कूद गया और उसकी मृत्यु हो गई।

6 प्रतिवादी नं 5 - 8 के विद्वान वकील .द्वारा तर्क दिया जाएगा कि, वास्तव में, पोस्टमार्टम करने वाले डॉक्टर ने I. O. PW 10 M. R. टम्टा को यह भी बताया कि मौत ऊंचाई से गिरने के कारण हो सकती है।यह तर्क दिया गया है कि पुनरीक्षण में साक्ष्य की सराहना नहीं की जा सकती और क्षेत्राधिकार काफी सीमित है।नामित वकील कानून के सिद्धांतों का उल्लेख करेंगे, जैसा कि बंसीलाल बनाम लक्ष्मण सिंह (1986) 3 एससीसी 444 वाले मामले में निर्धारित किया गया है।लक्ष्मण सिंह (1986) 3 एससीसी 444।बंसीलाल (उपर्युक्त) के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस विषय पर अधिकथित विधि के सिद्धान्त का उल्लेख करते हुए यह मत व्यक्त किया कि केवल इस परिस्थिति में कि आदेश विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित तथ्य का निष्कर्ष उच्च विचारण

न्यायालय की मत में गलत हो सकता है, अभियुक्त को दोषमुक्ति और पुनः आदेश का निदेश देने के आदेश को अपास्त करना न्यायोचित नहीं होगा।(पैरा 10)

7. प्रतिवादी नं. 2 से 4 की ओर से अधिवक्ता श्री आर. सी. टम्टा, प्रस्तुत करेंगे कि वह प्रतिवादी नं. 5-8 के अधिवक्ता श्री बी एस अधिकरी , के तर्क को वह मानते है। 5 से 8.इसके अलावा, वह तर्क देगा कि उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन, आरोपी अपने कर्तव्यों का पालन कर रहे थे-उनका कोई अपराध करने का इरादा नहीं था-पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट साबित नहीं हुई है-कोई सबूत नहीं है और संशोधन में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।अपने तर्क के समर्थन में वकील ने अकालू अहीर और अन्य बनाम रामदेव राम, 1973 2 एस. सी. सी. 583 के मामले में अधिकथित विधि के सिद्धांतों पर भरोसा रखा ।अकालू अहीर (उपर्युक्त) के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने हाईकोर्ट की पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के दायरे पर चर्चा की और कहा कि जब किसी निजी पक्ष द्वारा दोषमुक्ति के आदेश से पुनरीक्षण की अपनी शक्ति का उपयोग करने के लिए हाईकोर्ट से संपर्क किया जाता है, तो उसे उचित रूप से हस्तक्षेप से बचना चाहिए जब तक कि गम्भीर प्रकृति की स्पष्ट कानूनी त्रुटि न हो जिसके परिणामस्वरूप न्याय की गम्भीर विफलता हुई हो।(पैरा 8)

8. इसी मामले में यह मत व्यक्त किया गया है कि "निचली अदालत द्वारा कानून के बुनियादी सिद्धांतों के कुछ उल्लंघन के परिणामस्वरूप होने वाले अन्याय के स्पष्ट मामलों में ही उच्च न्यायालय को दोषमुक्ति के आदेश को रद्द करने और बरी किए गए अभियुक्तों के पुनर्आदेश का निर्देश देने की शक्ति प्राप्त है।इस शक्ति की प्रकृति को देखते हुए इसका प्रयोग मात्र अपवादात्मक मामलों में और बहुत सावधानी के साथ किया जाना चाहिए।ऐसे आदेशों से अभियुक्त व्यक्तियों को उसके सभी पारिणामिक उत्पीड़न के साथ नए सिरे से विचारण का सामना करना पड़ता है तो मुकदमों को हल्के अपास्त नहीं किया जाना चाहिए और इस क्षेत्राधिकार का प्रयोग मात्र अपवादात्मक मामलों में ही किया जाना चाहिए जब प्रक्रिया में कोई स्पष्ट त्रुटि हो या कानून के किसी बिंदु पर स्पष्ट त्रुटि हो और परिणामस्वरूप न्यायाधीश की घोर हत्या हुई हो (पैरा 8)

9. अकालू अहीर (पूर्वोक्त) वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने पूर्व निर्णयों का उल्लेख करते हुए निम्नलिखित रूप में अभिलिखित किया हैः

इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस न्यायालय की मत में ऐसे असाधारण मामलों का निर्धारण करने के लिए कोई मानदंड निर्धारित नहीं किया जा सकता है जिसमें पुनः विचारण का आदेश देने की उच्च न्यायालय की शक्ति को आकर्षित करने के लिए सभी आकस्मिक परिस्थितियां शामिल होंगी।

जहां विचारण न्यायालय के पास मामले का विचारण करने की कोई क्षेत्राधिकार नहीं है किंतु फिर भी अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया है (ii) जहां विचारण न्यायालय ने गलत रूप से ऐसे साक्ष्य को बंद कर दिया है जिसे अभियोजन पक्ष प्रस्तुत करना चाहता था (iii) जहां अपील विचारण न्यायालय ने गलत रूप से साक्ष्य को, जिसे विचारण न्यायालय द्वारा ग्रहण किया गया था, अस्वीकार्य माना है (iv) जहां तात्विक साक्ष्य की या तो विचारण न्यायालय द्वारा या अपील न्यायालय द्वारा उपेक्षा की गई है यद्यपि (v) जहां

दोषमुक्ति अपराध के ऐसे शमन पर आधारित है जो विधि से अविधिमान्य है।यद्यपि ये श्रेणियां मात्र व्याख्यात्मक मात्र थीं और यह स्पष्ट किया गया था कि इसी तरह के अन्य मामलों को भी विशेष प्रकृति का माना जा सकता है जहां उच्च न्यायालय उचित रूप से दोषमुक्ति के आदेश में हस्तक्षेप कर सकता है (पैरा 8)

10. यह दोषमुक्ति के विरुद्ध पुनरीक्षण है।आपराधिक कानून का मूल सिद्धान्त यह है कि दोषी साबित होने तक आरोपी को निर्दोष माना जाता है और एक बार दोषमुक्ति का निष्कर्ष दर्ज होने के बाद, यह अनुमान थोड़ा और मजबूत हो जाता है।यह तय कानून है कि अपील के मामलों में भी दोषमुक्ति के आदेश में हल्के से हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए।लेकिन, यहां मामला है, जहां दोषमुक्ति को एक संशोधन में चुनौती दी जाती है।पुनरीक्षण का क्षेत्राधिकार अपील के क्षेत्राधिकार के समानांतर नहीं है।

11. महाराष्ट्र राज्य बनाम जगमोहन सिंह कुलदीप सिंह आनंद, (2004) 7 एससीसी 659 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 395 से खंड धारा 401 के उपबंधों को एक साथ पढ़ने पर यह संकेत नहीं मिलता कि उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग दूसरी अपीलीय शक्ति के रूप में किया जा सकता है (पैरा 22)।

12. महाराष्ट्र राज्य बनाम सुजय मंगेश पोयारेकर, (2008) 9 एस. सी. सी. 475 के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि "अब यह अच्छी तरह से स्थापित हो गया है कि पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग मात्र अपवाद स्वरूप मामलों में ही किया जा सकता है।कोई पुनरीक्षण न्यायालय स्वयं को नियमित अपील न्यायालय में परिवर्तित नहीं कर सकता है।(पैरा 16)

13. उपबंधों के केवल परिशीलन से यह भी स्पष्ट है कि पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग निर्णय की शुद्धता, वैधता या औचित्य के बारे में संतुष्ट करने के प्रयोजन के लिए किया जाता है।

14. अमित कपूर बनाम रमेश चंद्रा और अन्य (2012) 9 एससीसी 462 के मामले में, पैरा 12 में, माननीय न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि यदि इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों पर गौर किया जाए, तो यह पता चलता है कि जहां चुनौती के निर्णय सरासर गलत हैं, कानून के प्रावधानों का कोई अनुपालन नहीं है, अभिलिखित निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है, तात्विक साक्ष्य को नजरअंदाज किया जाता है या न्यायिक विवेकाधिकार का मनमाने ढंग से या विपरीत तरीके से उपयोग किया जाता है, वहां पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का उपयोग किया जा सकता है।ये व्यापक वर्ग नहीं हैं, बल्कि मात्र संकेतक हैं।प्रत्येक मामले को अपने गुणों के आधार पर निर्धारित करना होगा।(पैरा 12)

15. साक्ष्य की सराहना की आवश्यकता नहीं है, सिवाय उस स्थिति के जब विकृति आदि की जांच करना आवश्यक हो।जैसा कि अमित कपूर (ऊपर) के मामले में देखा गया है।साक्ष्यों की विश्वसनीयता संभवतः पुनरीक्षण न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में नहीं है। किंतु, यदि तात्विक साक्ष्य की उपेक्षा की जाती है या अप्रासंगिक सामग्री पर विचार किया जाता है और साथ ही कुछ विकृति होती है, तो पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार लागू होता है।किसी साक्षी की विश्वसनीयता, विश्वसनीयता या विश्वसनीयता के प्रश्न की पुनरीक्षण में संभवतः जांच नहीं की जा सकती है।'वैधता' शब्द व्यापक है, इसे किसी सीधे जैकेट फार्मूले में नहीं डाला जा सकता है।यहां कई कानून और संबंधित प्रक्रियाएं, उप-नियम आदि हैं।कोई भी उल्लंघन शायद निर्णय को अवैध बना सकता है।जब वैधता की जांच की जानी हो तो तथ्यों को भी मात्र वैधता की जांच करने सीमा तक देखा जाना चाहिए।साक्ष्य की सराहना करने के उद्देश्य से नहीं।साक्षी की

विश्वसनीयता, विश्वसनीयता और विश्वसनीयता का परीक्षण करने के लिए नहीं।मात्र इस सीमित सीमा तक, यह न्यायालय मामले को आगे बढ़ाने का साहस करता है।

16. संशोधनवादी की ओर से मुख्य तर्क सबूत के बोझ के संबंध में है।यह तर्क दिया जा रहा है कि अभियोजन पक्ष ने साबित कर दिया है कि मृतक को आरोपी द्वारा हथकड़ी लगाकर उसके घर से ले जाया गया था।आरोपी ने मृतक की पिटाई कर दी।उनसे मृतक को छोड़ने का अनुरोध किया गया, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया।पीडब्लू 4 प्रकाश राम ने उनका पीछा किया, हाथ जोड़कर उनसे अनुरोध किया, लेकिन वे नहीं माने।

17. प्रतिवादी नं.5 से 8, विद्वान अधिवक्ता साइट प्लान का उल्लेख कर सकते हैं।इसके लिए दो स्थल योजनाएं हैं।न्यायालय कुछ ही समय में उन्हें संदर्भित करेगा।लेकिन, इससे पहले यह देखना होगा कि सबूत के बोझ को नियंत्रित करने वाला सिद्धान्त क्या है।

सबूत क्या है?इसे कैसे साबित किया जाए?इन सभी को भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (संक्षेप में साक्ष्य अधिनियम) के से परिभाषित किया गया है।धारा 3 साक्ष्य को परिभाषित करती है, इखंड उद्धृत करने की आवश्यकता नहीं है।"" "साक्ष्य अधिनियम के भाग (III) अध्याय VII सबूत के बोझ खंड संबंधित है और धारा 101 साक्ष्य अधिनियम के अनुसार," "जो कोई भी किसी न्यायालय को तथ्यों के अस्तित्व पर निर्भर किसी कानूनी अधिकार या दायित्व के बारे में निर्णय देना चाहता है, जिखंड वह दावा करता है, उखंड साबित करना चाहिए कि वे तथ्य मौजूद हैं।"और खंड 101 साक्ष्य अधिनियम के दूसरे पैराग्राफ में कहा गया है कि जब कोई व्यक्ति किसी तथ्य के अस्तित्व को साबित करने के लिए बाध्य है, तो यह कहा जाता है कि सबूत का बोझ उस व्यक्ति पर पड़ता है।

19. आपराधिक न्यायशास्त्र का स्वर्णिम नियम यह है कि मामले को युक्तियुक्त संदेह के बाद साबित करना अभियोजन है। लेकिन क्या अभियोजन पक्ष को सभी मामलों में प्रत्येक तथ्य को साबित करना है जो अभियुक्त के अपराध को साबित कर सकता है?क्या बुनियादी नियम से कोई विचलन नहीं है?और अगर हां, तो वे नियम क्या हैं और प्रस्थान कैसे किया जा सकता है?

ऐसे कानून अब न मात्र भारत में बल्कि पूरी दुनिया में बढ़ रहे हैं, जहां सबूत के बोझ के मूल सिद्धान्त को 'निर्दोषिता की धारणा' से बदलकर 'अपराध की धारणा' कर दिया गया है।यह अधिनियम के माध्यम से किया गया है।लेकिन शायद साबित करने की जिम्मेदारी का महत्व काफी अलग है।

21. साक्ष्य अधिनियम की खंड 102 में यह परिभाषित किया गया है कि साबित करने की जिम्मेदारी किस पर है।

किसी वाद या कार्यवाही में सबूत का बोझ उस व्यक्ति पर होता है जो किसी भी पक्ष की ओर से कोई सबूत नहीं दिए जाने पर विफल हो जाएगा।

22. धारा 106 उन धाराओं में से एक है, जो सामान्य नियम खंड से हटकर है।साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अनुसार, जब कोई तथ्य विशेष रूप से किसी व्यक्ति के ज्ञान के भीतर होता है, तो यह साबित करने का बोझ उस पर होता है

23 बहुत समय पूर्व नारायण गोविंद गावटे आदि बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1977) 1 एससीसी 133 के मामले में भूमि के संबंध में कुछ मुद्दों का निर्वचन करते हुए, जिन्हें भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 के उपबंध के से अधिग्रहित करने की मांग की गई थी, माननीय उच्चतम न्यायालय ने सबूत शब्द और साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 खंड संबंधित प्रावधानों का भी निर्वचन किया था। इसे निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गयाः

"" "।"साक्ष्य के प्रभाव को साक्ष्य अधिनियम खंड धारा 3 के उपबंधों द्वारा परिभाषित किया गया है। साक्ष्य के प्रभाव को न्यायालय को यह दिखाने के कर्तव्य या भार से अलग किया जाना चाहिए कि उसे किस निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए।इस कर्तव्य को प्रोबेंडी कहा जाता है, जो विभिन्न स्थितियों के लिए लागू कानून के उचित प्रावधानों के अनुसार एक पक्ष पर रखा जाता है, लेकिन, प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का प्रभाव निष्कर्ष या निष्कर्ष पर पहुंचने का मामला है।

20. किसी कार्यवाही के अंत में साक्ष्य के कुल प्रभाव का अवधारण न मात्र साक्ष्य अधिनियम की धारा 101 और 102 द्वारा अधिरोपित सामान्य कर्तव्यों पर बल्कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 103 और 106 जैसे अन्य उपबंधों द्वारा अधिरोपित विशेष या विशिष्ट कर्तव्यों पर भी विचार करके किया जाता है।

21. 103 है।किसी विशेष तथ्य के बारे में सबूत का भार उस व्यक्ति पर है जो न्यायालय को उसके अस्तित्व में विश्वास करने के लिए चाहता है, जब तक कि किसी कानून द्वारा यह प्रावधान नहीं किया जाता है कि उस तथ्य का सबूत किसी विशेष व्यक्ति पर होगा।

और, खंड 106 में कहा गया हैः

"106.जब कोई तथ्य विशेष रूप से किसी व्यक्ति के ज्ञान के भीतर होता है, तो उस तथ्य को साबित करने का बोझ उस पर होता है।"

24. त्रिमुख मारोती किरकान बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2006) 10 एस. सी. सी. 681 के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने साक्ष्य अधिनियम खंड धारा 106 के उपबंधों का निर्वचन किया और यह मत व्यक्त किया कि "यहां साक्ष्य अधिनियम खंड धारा 106 को ध्यान में रखना आवश्यक है जो कहती है कि जब कोई तथ्य विशेष रूप खंड किसी व्यक्ति खंड जानकारी के भीतर है, तो यह साबित करने का भार उस पर है।

यह उपबंध इस प्रकार हैः

(ख) ए पर बिना टिकट रेल से यात्रा करने का आरोप है।यह साबित करने का बोझ उन पर है कि उनके पास टिकट है (पैरा 14)

यह भी पाया गया कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के मद्देनजर, घर के निवासियों को इस बारे में एक ठोस स्पष्टीकरण देने का बोझ होगा कि अअग्रेतराध कैखंड किया गया था।घर के कैदी केवल चुप रहकर और इस तथाकथित आधार पर कोई स्पष्टीकरण नहीं

दे कर नहीं बच सकते कि अपना मामला स्थापित करने का बोझ पूरी तरह से अभियोजन पक्ष पर है और किसी भी आरोपी पर कोई स्पष्टीकरण देने का कोई कर्तव्य नहीं है.(पैरा 15) (जोर दिया गया)

25 अभिरक्षान्तर्गत मृत्यु से संबंधित एक अन्य मामला है।सुनील महादेव जाधव बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2013) 15 एस. सी. सी. 177 के मामले में साक्ष्य अधिनियम की खंड 106 पर अग्रेतर चर्चा की गई और माननीय न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त कियाः

36 है।साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 में कहा गया है कि जब कोई तथ्य विशेष रूप खंड किसी व्यक्ति के ज्ञान के भीतर होता है, तो यह साबित करने का बोझ उस पर होता है।चूंकि यह अभियुक्त 1 था जिसने 17-12-1985 को प्रातः 00.45 बजे मृतक को गिरफ्तार किया था और उसकी गिरफ्तारी पूरी होने के पश्चात उसे पुलिस हवालात में रखा था, इसलिए यह अभियुक्त 1 का दायित्व था कि वह मृतक के शरीर पर चोट के बारे में स्पष्टीकरण दे।अभियुक्त ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में सीआरपीसी) की खंड 313 के से अपने बयान में इस संबंध में कुछ भी नहीं कहा है और न ही इन चोटों को समझाने के लिए बचाव में कोई सबूत पेश किया है। अभियुक्त 1 द्वारा किसी स्पष्टीकरण की अनुपस्थिति में में या अभियुक्त 1 की ओर से मृतक के शरीर पर इन चोटों को स्पष्ट करने के लिए दिए गए किसी साक्ष्य की अनुपस्थिति में में, इस निष्कर्ष से बचा नहीं जा सकता है कि ये घाव अभियुक्त 1 द्वारा मृतक के शरीर पर कारित किए गए हैं और कोई और नहीं।"(जोर दिया गया)

26 अग्रेतर राजस्थान राज्य बनाम ठाकुर सिंह, (2014) 12 एस. सी. सी. 211 के मामले में न्यायालय ने साक्ष्य अधिनियम की खंड 106 के उपबंधों का निर्वचन करते हुए कुछ पहले के मामलों के प्रति निर्देश किया और निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित कियाः

16. शंभू नाथ मेहराव में बहुत पीछे।अजमेर राज्य-अजमेर राज्य-इस न्यायालय ने साक्ष्य अधिनियम खंड खंड 106 के निर्वचन पर विचार किया और अभिनिर्धारित किया कि खंड का आशय (अपराध के संबंध में) सबूत का भार अभियुक्त पर डालना नहीं है बल्कि ऐसी स्थिति का ध्यान रखना है जहां मात्र अभियुक्त को तथ्य ज्ञात है और उस तथ्य को साबित करना अभियोजन के लिए लगभग असंभव या अत्यंत कठिन है।

कहा गया थाः(ए. आई. आर. पृष्ठ 406, पैरा 11)

'11.यह [धारा 101] सामान्य नियम निर्धारित करती है कि किसी आपराधिक मामले में सबूत का बोझ अभियोजन पर होता है और धारा 106 का निश्चित रूप खंड उखंड उस कर्तव्य खंड मुक्त करने का इरादा नहीं है।इसके विपरीत, यह कुछ अपवादात्मक मामलों को पूरा करने के लिए डिज़ाइन किया गया है जिसमें अभियोजन के लिए ऐसे तथ्य स्थापित करना असंभव होगा, या किसी भी तरह से असमानुपातिक रूप से कठिन होगा जो विशेष रूप से अभियुक्त की जानकारी में हैं और जिन्हें वह बिना किसी कठिनाई या असुविधा के साबित कर सकता है।

विशेष रूप से शब्द उस पर जोर देता है।इसका अर्थ उन तथ्यों से है जो उनके ज्ञान में हैं या असाधारण रूप से हैं।यदि इस धारा खंड व्याख्या अन्यथा खंड जाती है तो इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि हत्या के मामले में यह साबित करने का भार अभियुक्त पर है कि उसने हत्या नहीं खंड क्योंकि उससे बेहतर कौन जानता है कि उसने खंड थी या नहीं।

27 राजेन्द्र @राजेश @राजू बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली), (2019) 10 एस. सी. सी. 623 के मामले में माननीय न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त कियाः

12. 2.4 ऐसा करने के बाद, यह ध्यान दें करना महत्वपूर्ण है कि अभियुक्त द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण की युक्तियुक्तता कि वह मृतक के साथ कैसे और कब अलग हो गया, किसी मामले में अंतिम बार देखे गए प्रभाव पर प्रभाव डालती है।भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 में यह प्रावधान है कि किसी भी तथ्य के लिए सबूत का बोझ जो विशेष रूप खंड किसी व्यक्ति की जानकारी के भीतर है, उस व्यक्ति पर है।इस प्रकार, यदि एक व्यक्ति को अंतिम बार मृतक के साथ देखा जाता है, तो उसे यह स्पष्टीकरण देना चाहिए कि वह मृतक के साथ कैसे और कब अलग हुआ था।दूसरे शब्दों में, उखंड एक स्पष्टीकरण को धूमिल करना चाहिए जो न्यायालय को संभावित और संतोषजनक प्रतीत होता है, और यदि वह अपनी विशेष जानकारी के भीतर तथ्यों के आधार पर ऐसा स्पष्टीकरण देने में विफल रहता है, तो धारा 106 के से उस पर डाले गए बोझ का उन्मोचन नहीं किया जाता है.विशेष रूप से पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित मामलों में, यदि अभियुक्त अपने ऊपर डाले गए भार के निर्वहन में उचित स्पष्टीकरण देने में विफल रहता है, तो ऐसी असफलता अपने आप में उसके विरुद्ध साबित परिस्थितियों की श्रृंखला में एक अतिरिक्त कड़ी प्रदान कर सकती है।यद्यपि इसका यह अर्थ नहीं है कि खंड 106 अभियुक्त पर आपराधिक विचारण के सबूत का भार डालती है।ऐसा बोझ हमेशा अभियोजन पर पड़ता है।धारा 106 मात्र इस नियम को अधिकथित करती है कि जब अभियुक्त उन तथ्यों पर प्रकाश नहीं डालता है जो विशेष रूप खंड उसके ज्ञान के भीतर हैं और जो उसकी निर्दोषिता के साथ संगत किसी सिद्धांत या परिकल्पना का समर्थन नहीं कर सकते हैं, तो न्यायालय एक अतिरिक्त लिंक के रूप में स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने में उसकी विफलता पर विचार कर सकता है जो आपत्तिजनक परिस्थितियों की श्रृंखला को पूरा करता है।) (जोर दिया गया)

28. वर्तमान मामले में प्रश्न यह है कि क्या अभियोजन ने अपने मामले को इस सीमा तक साबित कर दिया है कि स्पष्टीकरण देने का भार अभियुक्त पर जाता है।

जब तक आरोपी से स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं होती तब तक चुप रहना अच्छा है।प्रारंभ में अभियोजन पक्ष को अपने मामले को उस सीमा तक साबित करना होता है, यह साबित कर सकता है।धारा 102 साक्ष्य अधिनियम के अनुसार भार अभियोजन पर पड़ता है, किंतु तब जब यह प्रतीत होता है कि कुछ तथ्य विशेष रूप खंड अभियुक्त की जानकारी में हैं, तो अभियुक्त स्पष्टीकरण देने के लिए बाध्य है।तब वह चुप नहीं रह सकता।चुप्पी उसके विरुद्ध जाएगी।तब मौन को एक अतिरिक्त कड़ी के रूप में माना जा सकता है जो आपत्तिजनक परिस्थितियों की श्रृंखला को पूरा करता है।

29. वर्तमान मामले में, अभियोजन पक्ष के अनुसार, अभियुक्त मृतक राजू राम को उसके घर से तब ले गया जब वह बिस्तर पर था, उसे पीटा गया और उसके बाद मृतक की मृत्यु हो गई।बीच-बीच में जो कुछ हुआ वह विवाद का विषय हो सकता है।अदालत इस

मामले के उस पहलू में नहीं जा रही है।आरोपियों का पीछा किसने किया?आरोपी का पीछा कैसे किया गया?जिसने मृतक को किसी भी स्थिति में देखा, वह निश्चित रूप से सबूतों के मूल्यांकन के लिए मायने रखता है।

30. लेकिन, इस तथ्य में कोई संदेह नहीं है कि 05.01.2005 को सुबह 5 बजे:00, मृतक को आरोपी द्वारा उसके घर से ले जाया गया था।इनकी संख्या सात थी।वे राजस्व पुलिस अधिकारी हैं।ये वो लोग हैं जो अपराधों की जांच करते हैं।प्रतिवादी नं.2 पप्पू लाल ने खुद एसडीएम, कपकोट को एक पत्र दिया था, जो कि एक्स. ए. 19 है।दिलचस्प बात यह है कि इस एक्स. ए. 19 को पीडब्ल्यू5 मोहन राम द्वारा साबित किया गया है, जो स्वयं राजस्व विभाग में वरिष्ठ अधिकारी थे।प्रतिवादी नं.2 पप्पू लाल ने इस संचार एक्स. ए. 19, जो दिनांक 05.01.2005 है, में लिखा है कि जब उन्होंने मृतक राजू राम को गिरफ्तार किया और उसे मुख्यालय में लाया तो उसने राजस्व अधिकारियों को धक्का दिया और खाई में कूद गया।वह 200 मीटर की दूरी पर गिर गया और उसकी मौत हो गई।PW5 ने इस बारे में बात की थी।पीडब्ल्यू7 अर्जुन लाल भी प्रासंगिक समय में राजस्व अधिकारियों में से एक हैं।वह उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन 9 बजे यह भी बताते हैं किः00 बजे, प्रतिवादी पप्पू लाल और पूरन चंद हांफते हुए उसके पास आए.

जब इस गवाह ने उनसे पूछा कि क्या हुआ तो उन्होंने कहा कि अब आप क्या पूछते हैं।जो होना था वो हो गया।न मात्र मृतक की पत्नी और भाई, जो क्रमशः पीडब्लू ३ खिला देवी और पीडब्लू ४ प्रकाश चंद्र हैं, बल्कि, प्रतिवादी नं.2 पप्पू लाल ने यह भी कहा है कि मृतक राजस्व अधिकारियों की हिरासत में था.जैसा कि कहा गया है, प्रतिवादी नं.2 पप्पू लाल ने अपने उच्च अधिकारी को लिखित में दिया था कि उसकी हिरासत से मृतक खुद भाग गया और खाई में कूद गया और उसकी मृत्यु हो गई।उसकी मौत कैसे हुई?

31. प्रारंभ में, अभियोजन ने साबित किया है कि मृतक को अभियुक्त द्वारा लिया गया था और जब वह उनकी अभिरक्षा में था और उसकी मृत्यु हो गई थी।यहां साक्ष्य अधिनियम की खंड 106 का आवेदन आता है। अभियुक्त चुप नहीं रह सकता।उन्हें स्पष्टीकरण देना होगा।उन्हें न्यायालय को यह बताना था कि न्यायालय की संतुष्टि के अनुसार क्या हुआ है।उन्होंने क्या किया?किसी भी आरोपी ने कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया।संहिता की धारा 313 के से अपनी जांच में उन सभी ने कहा है कि उन्हें गलत तरीके खंड फंसाया गया है।यहां तक कि उन्होंने यह भी स्वीकार नहीं किया है कि उन्होंने मृतकों को गिरफ्तार किया था।अदालत में सच बोलने के लिए आरोपी सबसे अच्छे व्यक्ति थे।

यह सबूत के भार को रखने का प्रश्न है।निचली अदालत ने अपने फैसले में माना कि आरोपी की ओर से दी गई दलीलों में कहा विद्वान था कि जब मृतक को आरोपी लाया जा रहा था तो वह खाई में कूद विद्वान और उसकी मौत हो गई।लेकिन आरोपी ने कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है, यह सिर्फ एक तर्क है।आक्षेपित निर्णय के पृष्ठ ९ में, नीचे की अदालत ने मृतक की पत्नी पीडब्लू ३ खिला देवी के बयान को अस्वीकार कर दिया और कहा कि अभियोजन पक्ष मामले को साबित नहीं कर सका.इतना ही नहीं, निचली अदालत ने यह मात्र कहा कि अभियोजन पक्ष पोस्टमार्टम साबित नहीं कर सका।थोड़े समय में इस पहलू का भी उल्लेख किया जाएगा।यह सच है कि जांच अधिकारी द्वारा तैयार की गई साइट योजनाओं में, पीडब्लू ४ प्रकाश राम की उपस्थिति नहीं दिखाई गई है.लेकिन जैसा कि कहा गया है, जब अभियोजन से प्रत्येक तथ्य को साबित करने के लिए कहा गया तो पूरा संदर्भ बदल गया।

जबकि, धारा 106 साक्ष्य अधिनियम ने आरोपी खंड उन परिस्थितियों को समझाने की मांग की, जिनके से मृतक की मृत्यु हुई थी। अभियोजन पर सबूत का पूरा बोझ डालते हुए नीचे की अदालत ने निश्चित रूप से एक अवैधता की है

33. विचारण विचारण न्यायालय की भूमिका मात्र पक्षकारों की त्रुटियों को गिनना नहीं है।अदालत मूक दर्शक नहीं हो सकती।यह सिर्फ एक रेफरी की तरह काम नहीं कर सकता।संहिता की खंड 311 न्यायालय को किसी व्यक्ति को गवाह के रूप में समन करने के लिए सशक्त करती है यदि उसका साक्ष्य मामले के न्यायसंगत निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होता है।वर्तमान मामले में, राजू राम की मृत्यु पर सवाल उठाया गया है।क्या उसकी मौत पहाड़ों से गिरने के कारण हुई या उसकी हत्या कर दी गई और जहां उसका शव मिला, वहां उसे नीचे फेंक दिया गया।ये वास्तव में महत्वपूर्ण प्रश्न थे।सिर्फ कुछ लोगों ने डॉक्टर के हस्ताक्षर साबित कर दिए और फैसला लिखते समय अदालत ने कहा कि पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट साबित नहीं हुई है।शायद अदालत डॉक्टर को बुलाने के अपने कर्तव्य में विफल रही।

राजाराम प्रसाद यादव बनाम बिहार राज्य और अन्य (2013) 14 एस. सी. सी. 461 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने संहिता की खंड 311 के उपबंधों को शासित करने वाले सिद्धांतों को नीचे गिरा दिया और निम्नलिखित रूप में मत व्यक्त कियाः

'17.उपरोक्त निर्णयों पर विचार करते हुए, साक्ष्य अधिनियम की खंड 138 के साथ सीआरपीसी की खंड 311 के से एक आवेदन पर विचार करते समय, हमें लगता है कि अदालतों को निम्नलिखित सिद्धांतों को ध्यान में रखना होगाः

17. 1 क्या अदालत यह सोचकर सही है कि उसे नए साक्ष्य की आवश्यकता है?क्या खंड 311 के से पेश किए जाने वाले साक्ष्य को अदालत द्वारा किसी मामले के न्यायसंगत निर्णय के लिए नोट किया जाता है?17. 2 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 311 के से व्यापक विवेकाधीन शक्ति के प्रयोग खंड यह सुनिश्चित होना चाहिए कि तथ्यों की अधूरी, अनिर्णायक और अटकलबाजी के आधार पर निर्णय नहीं दिया जाना चाहिए, क्योंकि इसखंड न्यायाधीश के उद्देश्य विफल हो जाएंगे।

17. 3 यदि मामले के न्यायसंगत विनिश्चय के लिए किसी साक्षी का साक्ष्य न्यायालय को आवश्यक प्रतीत होता है तो न्यायालय को ऐसे किसी व्यक्ति को समन करने और उसकी परीक्षा करने या उसे वापस लेने और पुनः परीक्षा करने की शक्ति होगी।सीआरपीसी की धारा 311 के से शक्ति का उपयोग मात्र सच्चाई का पता लगाने या ऐखंड तथ्यों के लिए उचित सबूत प्राप्त करने के उद्देश्य खंड किया जाना चाहिए, जिसखंड मामले का एक न्यायसंगत और सही निर्णय लिया जा सके.

17. 5 उक्त शक्ति के प्रयोग को अभियोजन मामले में कमी को पूरा करने के रूप में तब तक नहीं कहा जा सकता जब तक कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से यह स्पष्ट नहीं हो जाता कि न्यायाधीशालय द्वारा शक्ति के प्रयोग से अभियुक्त पर गम्भीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, जिसके परिणामस्वरूप न्यायाधीश की हानि होगी।

17. 6 व्यापक विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग विवेकपूर्ण तरीके से किया जाना चाहिए न कि मनमाने ढंग से।

17. 7 न्यायालय को स्वयं को संतुष्ट करना चाहिए कि मामले के न्यायसंगत आदेश पर पहुंचने के लिए ऐसे साक्षी की परीक्षा करना या अग्रेतर की जांच के लिए उसे याद करना हर तरह से आवश्यक था।

17. 8.सीआरपीसी की खंड 311 का उद्देश्य एक साथ अदालत पर सच्चाई का निर्धारण करने और एक न्यायसंगत निर्णय देने का कर्तव्य लगाता है।

17. 9.अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि अतिरिक्त साक्ष्य आवश्यक है, इसलिए नहीं कि इसके बिना निर्णय देना असंभव होगा, बल्कि इसलिए कि इस तरह के साक्ष्य पर विचार किए बिना न्यायाधीश की विफलता होगी।

17. 10 विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय स्थिति की अनिवार्यता, निष्पक्षता और अच्छी समझ को सुरक्षित रखा जाना चाहिए। विचारण को यह ध्यान रखना चाहिए कि विचारण में किसी पक्षकार को त्रुटियों को सुधारने से रोका नहीं जा सकता और यदि किसी असावधानी के कारण समुचित साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया या कोई संगत सामग्री अभिलेख पर नहीं लाई गई तो विचारण को ऐसी त्रुटियों को सुधारने की अनुमति देने के लिए उदार होना चाहिए।

17. 11 विचारण को इस स्थिति के प्रति सचेत रहना चाहिए कि सभी विचारण मूलतः कैदियों के लिए हैं और विचारण को उन्हें यथासंभव उचित तरीके पश्चात अवसर प्रदान करना चाहिए।तर्क की उस समानता में, अभियुक्त की कीमत पर संभावित प्रतिकूल प्रभाव के विरुद्ध अभियोजन का संरक्षण करने के बजाय अभियुक्त को अवसर दिलाने के पक्ष में गलती करना सुरक्षित होगा। न्यायालय को यह ध्यान रखना चाहिए कि ऐसे विवेकाधीन शक्ति के अनुचित या स्वेच्छापूर्ण प्रयोग के अवांछनीय परिणाम हो सकते हैं।

17. 1213 किसी भी पार्टी के विरुद्ध मामले की प्रकृति को बदलने के लिए अतिरिक्त साक्ष्य को छद्म रूप में प्राप्त नहीं किया जाना चाहिए।इस शक्ति का प्रयोग इस बात को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए कि जिस साक्ष्य के दिए जाने की संभावना है, उससे संबंधित मुद्दे का समाधान हो जाएगा और यह भी सुनिश्चित किया जाएगा कि दूसरे पक्षकार को खंडन करने का अवसर दिया जाए।

17. 14 अतः, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 311 से शक्ति का प्रयोग न्यायाधीशालय द्वारा मात्र ठोस और वैध कारणों खंड न्यायाधीश के उद्देश्यों को पूरा आदेश के लिए किया जाना चाहिए और इसका प्रयोग सावधानी, सावधानी और सतर्कता के साथ किया जाना चाहिए।

विचारण को यह ध्यान रखना चाहिए कि निष्पक्ष सुनवाई में आरोपी, पीड़ित और समाज के हित शामिल हैं और इसलिए, संबंधित व्यक्तियों को उचित और उचित अवसर प्रदान करना एक संवैधानिक लक्ष्य होने के साथ-साथ मानव अधिकार भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

इसके अग्रेतर हरियाणा राज्य बनाम राम मेहर और अन्य, (2016) 8 एस. सी. सी. 762 के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने विभिन्न अन्य प्राधिकारियों को निम्नलिखित रूप में निर्दिष्ट कियाः

23 बबलू कुमार और अन्य बनाम भारत संघ मामले में।न्यायालय ने मनु शर्मा में प्राधिकारियों को निर्दिष्ट किया।राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली, रत्तीराम, जे. जयललिता, कामताकाव राज्य।सी. के. यारप्पा रेड्डी और अन्य निर्णय लिए और यह अभिनिर्धारित किया किः(बबलू कुमार वाला मामला, एससीसीपी, पृष्ठ 798, पैरा 22)

22 है।निष्पक्ष विचारण की अवधारणा, अभियोजन की बाध्यता, समुदाय के हित और विचारण के कर्तव्य को ध्यान में रखते हुए यह अपरिहार्य रूप से कहा जा सकता है कि विचारण किसी विचारण की अध्यक्षता करते समय मूक दर्शक या मूक पर्यवेक्षक नहीं हो सकता।यह देखना विचारण का कर्तव्य है कि न तो अभियोजन पक्ष और न ही अभियुक्त आपराधिक मुकदमे के साथ सच्चाई का प्रदर्शन करें और न ही कार्यवाही की पवित्रता को नष्ट करें।वे अपने आप को इस तरह से संचालित करके समुदाय के हितों को जब्त नहीं कर सकते या उनका अपहरण नहीं कर सकते, जिसके परिणामस्वरूप विचारण हास्यास्पद हो जाए।यह अग्रेतर कहा गया है किः(एससीसी पृष्ठ 798, पैरा 22)

22..... कानून छद्म विचारण का अनुमोदन नहीं करता है।यह समाज के लिए गम्भीर चिंता का विषय है।इस तरह के विचारण में समूह के प्रत्येक सदस्य की एक अंतर्निहित रुचि होती है।किसी को भी इसमें सेंध लगाने की अनुमति नहीं दी जा सकती।विचारण यह सुनिश्चित करने के लिए बाध्य है कि न तो अभियोजन पक्ष और न ही बचाव पक्ष अनावश्यक अभियोजन करे और मुकदमे को अपने नियंत्रण से ले।

हम लाभ के साथ ध्यान दें कर सकते हैं, हालांकि संदर्भ अलग था, फिर भी संदेश बड़ा है।संदेश यह है कि निष्पक्ष विचारण के लिए सभी प्रकार के व्यक्तिगत विचारों के लिए कोई जगह नहीं है।

इस मामले में, निचली विचारण न्यायालय उन गवाहों को बुलाने के अपने कर्तव्य में विफल रही जिनके साक्ष्य मामले के न्यायसंगत निर्णय के विद्वान आवश्यक थे।

मामले के सभी पहलुओं पर विचार करने के बाद, इस न्यायालय का विचार है कि वास्तव में यह एक ऐसा मामला है जिसमें अदालत ने गलती खंड सबूत का पूरा बोझ अभियोजन पर डाल दिया और धारा 106 साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान को लागू नहीं किया।इतना ही नहीं, निचली अदालत मात्र अपने कर्तव्य में विफल रही।

2

बबलू कुमार और अन्य।बिहार राज्य, (2015) 8 एससीसी 787

3 मनु शर्मा।राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली), (2010) 6 एससीसी 1

रत्तीराम।मध्य प्रदेश राज्य, (2012) 4 एससीसी 516

जे. जयललिता।कर्नाटक राज्य, (2014) 2 एससीसी 401

कामताकाव राज्यआर. के. यारप्पा रेड्डी, (1999) 8 एस. सी. सी. 715.

बनाम बिहार राज्य, (2015) 8 एससीसी 787 वाले मामले में संहिता की धारा 311 के प्रावधान का उपयोग करते हुए किसी भी साक्षी को, जिसकी उपस्थिति मामले के न्यायसंगत निर्णय के लिए आवश्यक थी, विशेष रूप खंड उस डॉक्टर को, जिसने पोस्टमॉर्टम किया था, समन किया गया था।

38. तदनुसार, इस न्यायालय का विचार है कि यह वह मामला है जिसमें पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का अवलंब लिया जाना चाहिए।यह एक ऐसा मामला है जो इस बात की गारंटी देता है कि हस्तक्षेप किया जाना चाहिए।आक्षेपित आदेश और व्यवस्था कानून के अनुसार नहीं है।इसलिए, संशोधन की अनुमति दी जानी चाहिए।

39 प्रतिशत है।

संशोधन की अनुमति है।

आक्षेपित निर्णय और आदेश दिनांक 28.02.2008 को अपास्त जाता है।इस मामले को संहिता की धारा 313 के से आरोपी का बयान दर्ज करने के चरण खंड फिर खंड सुनवाई के लिए प्रतिप्रेषित किया जाता है।

निम्न न्यायालय उन गवाहों को समन करने पर विचार कर सकता है जिनके साक्ष्य मामले के न्यायसंगत निर्णय के लिए आवश्यक हैं।इसी प्रकार, अभियुक्त व्यक्ति भी संहिता की धारा 313 से नए सिरे खंड उनकी जांच कराने और यदि कोई हो तो अपने बचाव में साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए स्वतंत्र हैं।

विद्वान विचारण न्यायालय इस निर्णय में की गई टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए मामले का निर्णय करेगा।

43. निचले न्यायालय के अभिलेख के साथ इस निर्णय की एक प्रति अनुपालन के लिए नीचे के न्यायालय को प्रेषित की जाए।

(रवींद्र मैथानी, न्यायमूर्ति) 09.07.2020

जितेंद्र